

मामलों का विवरण

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम

ईएचएसएएन और एएनआर।

(2023 की सिविल अपील No.5721) 13 अक्टूबर, 2023

[पामिदिघंतम श्री नरसिम्हा और मनोज मिश्रा, जे. जे.]

हेडनोट्स

विचार के लिए विषय: क्या रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय को भूमि धारक से अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा लेने के संबंध में विवादास्पद मुद्दे पर निर्णय लेने से बचना चाहिए था, जबकि मुकदमे के पिछले दौर में इसका निर्णय नहीं लिया गया था, भले ही यह विचार के लिए उत्पन्न हुआ था।

शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999-उच्च न्यायालय ने दिनांक 1 के निर्णय और आदेश द्वारा रिट याचिका का निपटारा करते हुए घोषणा की कि विवादित भूमि प्रथम प्रतिवादी-मूल याचिकाकर्ता के कब्जे में बनी रहेगी और इसे अधिशेष भूमि के रूप में नहीं माना जाएगा क्योंकि वह शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 के लाभों का हकदार है-स्वामित्व:

आयोजित किया गया: निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए: (क) कि अधिशेष भूमि पर कब्जा करने के संबंध में एक गंभीर विवाद था; (ख) निहित अधिसूचना के प्रकाशन के बाद, राज्य द्वारा कथित रूप से कब्जा लेने की तारीख से पहली रिट याचिका को दायर करने में लगभग सात साल की देरी हुई थी; (ग) कि कब्जा लेने की कथित तारीख और पहली रिट याचिका के लिंग के बीच की अवधि का खसरा या खतौनी जैसा कोई दस्तावेजी सबूत मूल याचिकाकर्ता के नेतृत्व में नहीं था; (घ) मुकदमे के पहले दो दौरों में, उच्च न्यायालय ने अधिशेष भूमि के कब्जे के मुद्दे पर निर्णय लेने से परहेज किया, भले ही वह मुद्दा पक्षों के बीच सीधे उत्पन्न हुआ था; और (ङ)

905

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

जिस तारीख को मुद्दा उठाया जाता है, इस न्यायालय का विचार है कि उच्च न्यायालय को निरसन अधिनियम, 1999 में निर्दिष्ट कट ऑफ तिथि से पहले अधिशेष भूमि के वास्तविक कब्जे के संबंध में मुद्दे पर निर्णय लेने से बचना चाहिए था-इसके बजाय, रिट याचिकाकर्ता को एक मुकदमे में स्थानांतरित कर दिया जाना चाहिए था-उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को दरकिनार

कर दिया जाता है-प्रथम प्रतिवादी की रिट याचिका को मुकदमा दायर करने के उसके अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना खारिज कर दिया जाता है।[पैरा 35,36]

शहरों और अन्य संदर्भों की सूची

इंदौर विकास प्राधिकरण बनाम मनोहरलाल (2020) 8 एस. सी. सी. 129:

[2020] 3 एस. सी. आर. 1-अनुसरण किया गया।यू. पी. बनाम राज्यहरि राम (2013) 4 एस. सी. सी. 280:[2013] 2 एससीआर 301; सैयद मकबूल अली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2011) 15 एससीसी 383:[2011] 4 एस. सी. आर. 238; राज्य

असम बनाम भास्कर ज्योति सरमा और अन्य (2015) 5 एससीसी 321:[2014] 14 एससीआर 1451; बांदा विकास प्राधिकरण बनाम मोती लाल अग्रवाल (2011) 5

एससीसी 394:[2011] 7 एस. सी. आर. 435-पर निर्भर।

रघबीर सिंह सहरावत बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (2012) 1 एस. सी. सी. 792: [2011] 14 एस. सी. आर. 1113; नगर परिषद, अहमदनगर और एक अन्य बनाम.

शाह हैदर बेग और अन्य (2000) 2 एस. सी. सी. 48:[1999] 5 पूरक।एससीआर 197; एम. पी. बनाम राज्यघिसीलाल (2021) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1098; सक्षम प्राधिकारी,

कलकत्ता, शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 और एक अन्य बनाम डेविड मंटोश और अन्य (2020) 12 एस. सी. सी. 542:[2019] 4 एस. सी. आर. 331; सौरव जैन और एक अन्य बनाम ए. बी. पी. डिजाइन और एक और (2021) एससीसी ऑनलाइन एससी 552-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन शामिल हैं

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णय:2023 की सिविल अपील No.5721।2012 के डब्ल्यू. सी. No.21009 में इलाहाबाद में उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 08.10.2018 से।

रूप:

राणा मुखर्जी, वरिष्ठ अधिवक्ता, राजीव कुमार दुबे, आशिवन मिश्रा, सुश्री चांदनी अरोड़ा, सुश्री ओइंद्रिला, कमलेंद्र मिश्रा, अधिवक्ता।अपीलार्थियों के लिए।अंकुर यादव, उत्तरदाताओं के लिए अधिवक्ता।

907

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनामईएचएसएन और एएनआर।

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का निर्णय/आदेश

मनोज मिश्रा, जे.

1. यह अपील 2012 के रिट सी. 21009 में पारित उच्च न्यायालय के दिनांक 1 के निर्णय और आदेश के खिलाफ निर्देशित की गई है, जिसके द्वारा प्रथम प्रतिवादी 2 की रिट याचिका का यह घोषणा करते हुए निपटारा किया गया था कि विवादित भूमि मूल याचिकाकर्ता के कब्जे में बनी रहेगी और इसे अधिशेष भूमि के रूप में नहीं माना जाएगा क्योंकि वह शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) निरसन अधिनियम, 1999 3 के लाभों का हकदार है। उपरोक्त के अलावा, सक्षम प्राधिकरण (शहरी सीमा) सहारनपुर 4 को यह सुनिश्चित करने के लिए एक निर्देश जारी किया गया था कि मूल याचिकाकर्ता का नाम राजस्व रिकॉर्ड में बहाल किया जाए।

तथ्य/दलीलें

2. मूल याचिकाकर्ता के पास भूखंड संख्या सहित 7499.20 वर्ग मीटर की भूमि थी। 166, 177, 179 और 185 गाँव पंजौरा बैरूँ, तहसील और सहारनपुर ज़िले में। शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 5 के लागू होने के साथ, मूल याचिकाकर्ता के खिलाफ 1976 के मामले संख्या 2186 को जन्म देते हुए कार्यवाही शुरू की गई। इन कार्यवाही में, दिनांक 26.11.1977 के आदेश के माध्यम से, सक्षम प्राधिकरण ने 5499.20 वर्ग मीटर भूमि को अधिशेष घोषित किया।

3. उपरोक्त आदेश दिनांक 27.11.1977 पर वर्ष 1986 में उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका के माध्यम से सवाल उठाया गया था, जिसे दिनांक 3.1.1986 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। 3.1.1986 दिनांकित आदेश नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है: “यह रिट याचिका सक्षम प्राधिकरण, सहारनपुर दिनांक 26.11.1977 के आदेश के खिलाफ है-याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वकील का तर्क है कि विवादित आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना है और अप्रवर्तनीय है। यदि आदेश अप्रवर्तनीय है, तो याचिकाकर्ता

1 इलाहाबाद में उच्च न्यायालय 2 मूल याचिकाकर्ता

3 निरसन अधिनियम, 1999 4 सक्षम प्राधिकारी 5 अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976

908

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

संबंधित प्राधिकारी के समक्ष प्रदर्शन कर सकते हैं और यदि वह प्राधिकारी याचिकाकर्ता के खिलाफ फैसला करता है, तो याचिकाकर्ता संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है। इस स्तर पर, मैं विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं हूँ।

रिट याचिका को उपरोक्त अवलोकन के साथ सीमित रूप से खारिज कर दिया जाता है और याचिकाकर्ता के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस अदालत से संपर्क करने का अधिकार

होगा यदि उसके तर्क को इसके बाद स्वीकार नहीं किया जाता है। इस आदेश की एक प्रति सामान्य शुल्क की प्राप्ति पर 24 घंटे के भीतर याचिकाकर्ता को दी जा सकती है।”

4. उच्च न्यायालय द्वारा अपने दिनांकित 3.1.1986 के आदेश में की गई टिप्पणियों का लाभ उठाते हुए, मूल याचिकाकर्ता ने सक्षम प्राधिकरण के समक्ष आपत्तियों का नेतृत्व किया, जिन्हें खारिज कर दिया गया, दिनांकित 27.03.1987 के आदेश के माध्यम से, यह देखते हुए कि-- (ए) 5499.29 वर्ग मीटर भूमि को 26.11.1977 पर अधिशेष घोषित किया गया था; (बी) धारा 10 (1) के तहत अधिसूचना 09.1.1978 पर प्रकाशित की गई थी; (सी) धारा 10 (3) के तहत अधिसूचना 15.01.1979 पर की गई थी, (डी) जिला न्यायाधीश के समक्ष मूल याचिकाकर्ता की अपील 12.07.1979 पर खारिज कर दी गई थी; (ई) सक्षम प्राधिकरण के अधिकार क्षेत्र के संबंध में आपत्ति, इस आधार पर कि भूमि है

5. उपरोक्त आदेश दिनांक 27.03.1987 पर 1987 की रिट याचिका No.9702 के माध्यम से उच्च न्यायालय के समक्ष सवाल उठाया गया था, जिसमें 20.08.1987 पर, निम्नलिखित शर्तों में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था:

“नोटिस जारी करें।

इस बीच, याचिकाकर्ता को उसके पास अधिशेष घोषित भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा।”

6. उक्त रिट याचिका एक दशक से अधिक समय से लंबित थी और निरसन अधिनियम, 1999 को अधिसूचित किए जाने के बाद 28.02.2001 पर निर्णय लिया गया था। 28.02.2001 दिनांकित आदेश नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“पक्षकारों की विद्वान सलाह सुनी।

यह याचिका शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 से संबंधित है जिसे 1999 में निरस्त कर दिया गया था। पं. मदन स्वरूप श्रोटिया, पब्लिक 909

यू. पी. और ए. एन. आर. बनाम राज्य ईएचएसएन और एनआर। मनोज मिश्रा, जे.

धर्मार्थ न्यास बनाम। यू. पी. राज्य और अन्य जे. टी. 2000 (3) एस. सी. 391 उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि राज्य सरकार द्वारा कब्जा ले लिया गया है, तो अधिनियम के तहत कार्यवाही कम नहीं होगी, लेकिन यदि कब्जा नहीं लिया गया है तो कार्यवाही समाप्त हो जाएगी। हम यह स्पष्ट करते हैं कि अधिकार शब्द का अर्थ वास्तविक है।

कब्जा नहीं किया गया है (नोट: कुछ शब्द यहाँ गायब प्रतीत होते हैं)

ग्रहण की गई कार्यवाहियां कम नहीं होंगी अन्यथा वे कम हो जाएंगी। याचिका का तदनुसार निपटारा किया जाता है।”

(नोट: आपूर्ति की गई) 7.वर्ष 2012 में एक तीसरी रिट याचिका 6 का नेतृत्व प्रथम प्रतिवादी ने किया था, जिसमें दावा किया गया था कि अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा कभी नहीं लिया गया था; वह भूमि के कब्जे में बना हुआ है और इसलिए, यह घोषणा करने का हकदार है कि निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 4 के आधार पर अधिकतम सीमा की कार्यवाही समाप्त हो गई है। तीसरी रिट याचिका के लिए कार्रवाई का कारण यह था कि जब मूल याचिकाकर्ता ने 1414 से 1419 फसली के खतौनी (यानी अधिकारों का रिकॉर्ड) के उद्धरण के लिए आवेदन किया, तो उन्हें पता चला कि राज्य का नाम दिनांकित एक पत्र के अनुसार अभिलेखों में दर्ज किया गया था। इसलिए, इसे ठीक करने के लिए, रिट याचिका का नेतृत्व करना पड़ा।

8. मूल याचिकाकर्ता के मामले का खंडन करते हुए, राज्य और सक्षम प्राधिकरण (यानी, इसमें अपीलकर्ता) की ओर से, एक जवाबी हलफनामे में दावा किया गया था कि, अन्य बातों के साथ-साथ, -(i) मूल याचिकाकर्ता ने अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 6 (1) के तहत एक बयान दिया था, जिसके अनुसरण में, अधिशेष के रूप में भूमि के वर्ग मीटर का प्रस्ताव करने वाले एक मसौदा बयान को धारा 8 (3) के तहत 30.06.1977 पर जारी किया गया था; (ii) 26.11.1977 पर सक्षम प्राधिकरण ने मसौदा बयान को स्वीकार किया; (iii) धारा 10 (1) के तहत एक अधिसूचना पर प्रकाशित किया गया था, जिसमें कहा गया था कि

6 2012 की रिट याचिका संख्या 21009

910 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 13 एस. सी. आर.

उच्च न्यायालय के निष्कर्ष

9. उच्च न्यायालय ने दलीलों और अभिलेख पर सामग्री पर विचार करने के बाद निष्कर्ष निकाला:

“शीर्ष न्यायालय द्वारा उठाए गए प्रस्तुतिकरणों पर विचार करने और निर्धारित कानून को लागू करने के बाद, यह स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत 26.02.1979 दिनांकित नोटिस, जिसे 27.02.1979 पर दिया गया है, जैसा कि अनुच्छेद संख्या में आरोप लगाया गया है। काउंटर एफ़ाई डेविट के 4 में, याचिकाकर्ता द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया गया है, लेकिन इसे सही मानते हुए भी, वास्तविक भौतिक कब्जा कथित रूप से 08.03.1979 पर नहीं लिया जा सका क्योंकि 30 दिनों की अवधि समाप्त नहीं हुई थी। अन्यथा भी जिस दस्तावेज़ को काउंटर एफ़ी डेविट के अनुलग्नक संख्या 1 के रूप में प्रस्तुत किया गया है, वह एक रिपोर्ट है न कि वास्तविक कब्जा ज्ञापन। इसमें यह भी दर्ज किया गया है कि बशीर, जो याचिकाकर्ता के पिता हैं, ने कार्यवाही पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया, जबकि कब्जा ले लिया गया था और याचिकाकर्ता उस समय मौजूद नहीं था। इसलिए, यह स्पष्ट है कि यह 30 दिनों की वैधानिक अवधि की समाप्ति से पहले तैयार किया गया एक विशुद्ध कागजी लेनदेन था और यदि याचिकाकर्ता ने स्वैच्छिक कब्जा नहीं सौंपा होता, तो बेदखल 1970 अधिनियम की धारा 10 (6) के प्रावधानों का पालन करके ही संभव हो सकता था। ऐसी किसी प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है और न ही ऐसा कोई सबूत रिकॉर्ड में है। इसलिए यह स्पष्ट है कि वास्तविक भौतिक कब्जा लेने का मामला कानून के अनुरूप नहीं है और न ही वास्तविक कब्जा लिया गया प्रतीत होता है।”

10. ऊपर के रूप में निष्कर्ष निकालने से पहले, उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय सहित विभिन्न न्यायिक घोषणाओं पर ध्यान दिया, अर्थात्, (क) उत्तर प्रदेश राज्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य।

हरि राम **7**; (ख) रघबीर सिंह सहरावत बनाम हरियाणा राज्य और अन्य **8** और (ग) असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति सरमा और अन्य **9**।

11. हमने अपीलार्थियों के वरिष्ठ वकील श्री राणा मुखर्जी और प्रथम प्रतिवादी की ओर से श्री अंकुर यादव को सुना है।

7 (2013) 4 एससीसी 280 8 (2012) 1 एससीसी 792 9 (2015) 5 एससीसी 321 911

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएन और एनआर। मनोज मिश्रा, जे.

अपीलार्थियों की ओर से प्रस्तुतियाँ

12. अपीलार्थियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत नोटिस 27.02.1979 पर कार्यकाल धारक को दिया गया था। इसके अनुसार, 8.3.1979 पर कब्जा ले लिया गया था। हालाँकि, चूंकि मूल याचिकाकर्ता ने कब्जे के ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने से परहेज किया, इसलिए सक्षम प्राधिकरण मौके पर गया, दो सह-भागीदारों की उपस्थिति में कब्जा कर लिया और उस प्रभाव के लिए एक ज्ञापन तैयार किया। उसके बाद, राज्य का नाम 17.3.1982 पर राजस्व रिकॉर्ड में दर्ज किया गया। इस प्रकार, भूमि राज्य में निहित थी। बाद में, इसे 26.5.2003 पर सहारनपुर विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया। नतीजतन, मूल याचिकाकर्ता को निरसन अधिनियम, 1999 का लाभ उपलब्ध नहीं है।

13. अपीलकर्ताओं ने निम्नलिखित आधारों पर रिट याचिका की स्थिरता पर भी सवाल उठाए:

(i) पक्षकारों के बीच तथ्य के शुद्ध प्रश्न (अर्थात्, वास्तविक कब्जा लिया गया था या नहीं) पर एक गंभीर विवाद था, जिसे मौखिक साक्ष्य लेने के बाद उचित रूप से तय किया जा सकता था। इसके अलावा, कब्जे के दस्तावेजी साक्ष्य को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता था, क्योंकि (ए) अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत नोटिस की सेवा की तारीख से 30 दिनों की समाप्ति से पहले कब्जा ले लिया गया था, और (बी) कब्जे के ज्ञापन पर भूमि धारक के हस्ताक्षर नहीं थे। इन परिस्थितियों में, रिट याचिकाकर्ता को एक मुकदमे में स्थानांतरित कर दिया जाना चाहिए था, विशेष रूप से जब मुकदमे के पहले दो दौर में उच्च न्यायालय ने कब्जे के मुद्दे को संबोधित करने से परहेज किया था। ((ii) रिट याचिका बहुत विलंबित है, क्योंकि 1987 की रिट याचिका संख्या 9702 के निपटारे के बाद, राज्य में निहित भूमि को वर्ष 2003 में सहारनपुर विकास प्राधिकरण को हस्तांतरित कर दिया गया था और तब से यह उसके कब्जे में है, जबकि रिट याचिका वर्ष 2012 में दायर की गई थी। इस तरह की विलंबित याचिका को केवल विलंब के आधार पर ही खारिज कर दिया जाना चाहिए था। ((iii) एक बार जब राज्य में भूमि निहित हो जाती है और भूमि का कब्जा ले लिया जाता है, तो राज्य भूमि का पूर्ण स्वामी बन जाता है और उसे अपने अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है।

अपीलार्थियों के वकील द्वारा उद्धृत निर्णय।

14. अपनी दलीलों के समर्थन में, अपीलार्थियों के विद्वान वकील ने कई निर्णयों पर भरोसा किया, जिन पर ध्यान दिया गया है, और नीचे संक्षेप में चर्चा की गई है:

(i) सैयद मकबूल अली बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य 10. इस संदर्भ में,

वैध अधिग्रहण और मुआवजे के भुगतान के बिना भूमि के एक टुकड़े पर कब्जे को चुनौती देने के लिए, यह देखा गया कि भूमि धारक का उपाय या तो कब्जे की वसूली और/या मुआवजे के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर करना है, या एक रिट याचिका दायर करना है यदि कार्रवाई को मनमाना, तर्कहीन, अनुचित, पक्षपातपूर्ण, दुर्भावनापूर्ण या कानून के अधिकार के बिना दिखाया जा सकता है, और एक निर्देश की मांग करना है कि भूमि का अधिग्रहण कानून द्वारा ज्ञात तरीके से किया जाना चाहिए। यह भी देखा गया कि ऐसे मामलों में पीड़ित व्यक्ति को लगन से उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए। यदि रिट याचिका में देरी होती है, जब तक कि देरी के लिए अच्छा और संतोषजनक स्पष्टीकरण न हो, तो याचिका को देरी और विलंब के आधार पर खारिज कर दिया जाना चाहिए।

((ii) असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति सरमा, (ऊपर)। इस मामले में,

जो अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही से उत्पन्न हुई थी, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निरसन अधिनियम, 1999 की धारा 3 को केवल पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि मूल अधिनियम के निरसन से मूल अधिनियम की धारा 10 की उप-धारा (3) के तहत किसी भी भूमि को निहित करने का संबंध नहीं है, जिसका कब्जा राज्य सरकार या उस ओर से राज्य सरकार द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति या सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिया गया है। इसके अलावा, इस तर्क के संदर्भ में कि कब्जा लेने के लिए उचित प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया था, जबकि इसे अलग करते हुए

यू. पी. बनाम राज्य में न्यायालय का पिछला निर्णय हरि राम (ऊपर), यह

देखा/आयोजित किया गया था: “16. यह मानते हुए कि कब्जे में एक व्यक्ति शिकायत कर सकता है, अंतिम विश्लेषण में बहुत अधिक लाभ के बिना, सवाल यह है कि क्या ऐसी शिकायत कथित उल्लंघन के लंबे समय बाद की जा सकती है।

10 (2011) 15 एससीसी 383 913

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएएन और एएनआर। मनोज मिश्रा, जे.

धारा 10 (5)। यदि वास्तविक भौतिक कब्जा पूर्व भूमि मालिक से 7-12-1991 पर लिया गया था, जैसा कि वर्तमान मामले में आरोप लगाया गया है, तो धारा 10 (5) के आधार पर कोई भी शिकायत ऐसे बेदखल होने के उचित समय के भीतर की जानी चाहिए थी। यदि मालिक ऐसा नहीं

करता है, तो जबरन कब्जा लेने से समय बीतने के साथ वैधता प्राप्त हो जाएगी। ऐसी किसी भी स्थिति में मालिक या कब्जे वाले व्यक्ति को अधिनियम की धारा 10 (5) के तहत अपने अधिकार से मुक्त माना जाना चाहिए। कोई भी अन्य दृष्टिकोण, हमारी राय में, एक वादी को शिकायत करने का लाइसेंस देगा, इसलिए नहीं कि उसने किसी वास्तविक पूर्वाग्रह को पूरा किया है जिसे दूर करने की आवश्यकता है, बल्कि केवल इसलिए कि एक निरसन अधिनियम की आकस्मिक परिस्थिति ने उसे इस मुद्दे को उठाने के लिए लुभाया कि उसके बेदखल होने से निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन हो रहा है।

17. उत्तरदाताओं द्वारा रिलायंस को रखा गया था

हरि राम मामले में इस न्यायालय का निर्णय [यू. पी. राज्य।

बनाम हरि राम (2013) 4 एस. सी. सी. 280:(2013) 2 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 583] यह निर्णय, हमारे विचार में, उत्तरदाताओं को अधिक सहायता प्रदान नहीं करता है। हम ऐसा इसलिए कहते हैं, क्योंकि यह न्यायालय था

हरि राम मामले में [यू. पी. राज्य बनाम. हरि राम, (2013) 4

एससीसी 280:(2013) 2 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 583] इस बात पर विचार करते हुए कि क्या धारा 10 (5) में दिखाई देने वाला शब्द "हो सकता है" सक्षम प्राधिकारी को धारा 10 (6) के तहत विचाराधीन भूमि का भौतिक कब्जा लेने से पहले नोटिस जारी करने या न करने का विवेकाधिकार देता है। यह प्रश्न कि क्या धारा 10 (5) का उल्लंघन और बिना किसी सूचना के संभावित बेदखल करने से बेदखल करने के कार्य को ही दूषित कर देगा या इसे कानून की नजर में गैर-कानूनी बना देगा, उस मामले में विचार के लिए नहीं आया। हमारी राय में, जो धारा 10 (5) निर्धारित करती है वह एक सामान्य और तार्किक कार्रवाई है जिसका पालन अधिकारियों द्वारा धारा 10 (6) के तहत कब्जा करने वाले को बेदखल करने के लिए बल का उपयोग करने का निर्णय लेने से पहले किया जाना चाहिए। यदि दिसंबर 1991 में पूर्ववर्ती मालिक को बेदखल करने के संबंध में अपीलार्थी का कथन सही है, तो तथ्य यह है कि इस तरह का बेदखल धारा के तहत बिना किसी सूचना के किया गया था।

914

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

10(5) इसका कोई परिणाम नहीं होगा और यह निरसन अधिनियम की धारा 3 के प्रयोजनों के लिए कब्जा लेने के कार्य को दूषित या समाप्त नहीं करेगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि पूर्व मालिक भाबदेब सरमा ने अपने जीवनकाल के दौरान किसी भी स्तर पर धारा 10 (5) के उल्लंघन के आधार पर कोई शिकायत नहीं की थी, जिसका अर्थ है कि उन्होंने ऐसा करने के अपने अधिकार को माफ कर दिया था। (जोर दिया गया)

(iii) नगर परिषद, अहमदनगर और एक अन्य बनाम शाह हैदर।

बेग और अन्य 11. इस मामले में, भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही के लिए एक विलंबित चुनौती के संदर्भ में, इस सिद्धांत को लागू करते हुए कि देरी इक्विटी को पराजित करती है, यह देखा गया कि एक विलंबित चुनौती पर विचार नहीं किया जाना चाहिए और देरी की याचिका को तर्क के स्तर पर भी उठाया जा सकता है।

(iv) इंदौर विकास प्राधिकरण बनाम मनोहरलाल 12. अनुच्छेद

258 इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा दिए गए इस निर्णय का हवाला देते हुए कहा गया कि अधिग्रहण और कब्जा करने के परिणामस्वरूप एक बार राज्य में भूमि का अधिकार निहित हो जाने के बाद, भले ही भूमि धारक ने राज्य द्वारा कब्जा किए जाने के बाद उस पर कब्जा बनाए रखा हो या अन्यथा अतिक्रमण किया हो, वह एक अतिक्रमणकारी बना रहता है और उसका कब्जा राज्य की ओर से माना जाएगा।

(v) बांदा विकास प्राधिकरण बनाम मोती लाल अग्रवाल 13. इसमें

इस मामले में, इस न्यायालय ने भूमि धारक से भूमि के एक टुकड़े पर कब्जा करने के तरीके से संबंधित सिद्धांतों को अलग किया। फैसले का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया है:

“37. उपर्युक्त निर्णयों से जिन सिद्धांतों को निकाला जा सकता है, वे हैं:

(i) अधिग्रहित भूमि पर कब्जा करने के लिए कोई कठोर और त्वरित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

11 (2000) 2 एससीसी 48 12 (2020) 8 एससीसी 129 13 (2011) 5 एससीसी 394 915

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएन और एनआर। मनोज मिश्रा, जे.

((ii) यदि अधिग्रहित भूमि खाली है, तो संबंधित राज्य प्राधिकरण का उस स्थान पर जाने और पंचनामा तैयार करने का कार्य आमतौर पर कब्जा करने के लिए पर्याप्त माना जाएगा।

((iii) यदि अधिग्रहित भूमि या भवन/संरचना पर फसल खड़ी है, तो केवल संबंधित प्राधिकारी द्वारा मौके पर जाना, अपने आप में, कब्जा करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। आमतौर पर, ऐसे मामलों में, संबंधित प्राधिकारी को भवन/संरचना के अधिभोगकर्ता या उस व्यक्ति को नोटिस देना होगा जिसने भूमि पर खेती की है और स्वतंत्र गवाहों की उपस्थिति में कब्जा करना होगा और पंचनामे पर उनके हस्ताक्षर प्राप्त करने होंगे। बेशक, भूमि या भवन/संरचना के मालिक के इनकार से यह निष्कर्ष नहीं निकल सकता है कि अधिग्रहित भूमि का कब्जा नहीं लिया गया है।

(iv) यदि अधिग्रहण भूमि के एक बड़े हिस्से का है, तो अधिग्रहण/नामित प्राधिकारी के लिए भूमि के प्रत्येक हिस्से पर भौतिक कब्जा करना संभव नहीं हो सकता है और यह पर्याप्त होगा कि स्वतंत्र

गवाहों की उपस्थिति में उचित दस्तावेज तैयार करके और ऐसे दस्तावेज पर उनके हस्ताक्षर प्राप्त करके प्रतीकात्मक कब्जा लिया जाए।

(iv) यदि अधिग्रहण का लाभार्थी राज्य की एक एजेंसी/साधन है और कुल मुआवजे का 80 प्रतिशत धारा 17 (3-ए) के संदर्भ में जमा किया जाता है और अधिग्रहित भूमि के बड़े हिस्से का उपयोग विशेष सार्वजनिक उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए किया गया है, तो अदालत उचित रूप से यह मान सकती है कि अधिग्रहित भूमि का कब्जा ले लिया गया है।

38. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, हमारा मानना है कि संबंधित राज्य अधिकारियों की मौके पर जाने और कब्जे की डिलीवरी दिखाने के लिए पंचनामा तैयार करने की कार्रवाई इस तथ्य को दर्ज करने के लिए पर्याप्त थी कि पूरी अधिग्रहित भूमि का वास्तविक कब्जा ले लिया गया था और बीडीए को सौंप दिया गया था। अर्जित राशि के बड़े हिस्से का उपयोग

916

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

जिस सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया था, वह इस तथ्य का स्पष्ट संकेत है कि अधिग्रहित भूमि का वास्तविक कब्जा बी. डी. ए. द्वारा ले लिया गया था। एक बार जब यह माना जाता है कि अधिग्रहित भूमि का कब्जा बी. डी. ए. को 30-6-2001 पर सौंप दिया गया था, तो उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया विचार कि धारा 11-ए का पालन न करने के कारण अधिग्रहण की कार्यवाही समाप्त हो गई थी, को कायम नहीं रखा जा सकता है।”

(जोर दिया गया)

प्रथम उत्तरदाता की ओर से प्रस्तुतियाँ

15. इसके विपरीत, प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से, यह प्रस्तुत किया गया था कि एक बार जब उच्च न्यायालय ने दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से उसे सक्षम प्राधिकरण के समक्ष आपत्ति दर्ज करने की अनुमति दे दी थी, तो उससे पहले की गई कोई भी कार्रवाई आगे की कार्यवाही में आगे के आदेशों के अधीन हो गई। 1987 की रिट याचिका संख्या 9702 में, एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसमें निर्देश दिया गया था कि मूल याचिकाकर्ता को विवादित भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा। इस रिट याचिका का निपटारा यह माने बिना किया गया था कि अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा ले लिया गया था। इसलिए, मुकदमे के तीसरे दौर में, जब मूल याचिकाकर्ता ने दावा किया कि वास्तविक कब्जा कभी भी राज्य द्वारा नहीं लिया गया था, तो यह स्थापित करने का बोझ राज्य पर था कि कब्जा ले लिया गया था। राज्य को न केवल यह साबित करना था कि भूमि का वास्तविक कब्जा ले लिया गया था, बल्कि यह भी कि इसे कानून के अनुसार लिया गया था। हालाँकि, उस बोझ को पूरा करने के लिए, राज्य द्वारा कोई उचित दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था। इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय को रिट याचिका की अनुमति देने में न्यायसंगत ठहराया गया था।

16. यह आग्रह किया गया कि, निश्चित रूप से, अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के प्रावधानों का कोई अनुपालन नहीं किया गया था क्योंकि 30 दिनों का नोटिस नहीं दिया गया था। इसके अलावा, कब्जे के ज्ञापन पर जमींदार के हस्ताक्षर नहीं थे। इसके अलावा, कोई मुआवजा नहीं दिया गया। इसलिए, यह इंगित करने के लिए किसी भी ठोस साक्ष्य के अभाव में कि कब्जा अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (6) के तहत अनुमेय तरीके से लिया गया था, निरसन अधिनियम, 1999 का लाभ प्रदान करना न्यायसंगत था।

17. तीसरी रिट याचिका में देरी के संबंध में, प्रथम प्रतिवादी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय का दिनांकित 28.02.2001 आदेश पहले से ही प्रथम प्रतिवादी और 917 के पक्ष में काम कर रहा था।

यू. पी. और ए. एन. आर. बनाम राज्यईएचएसएन और एएनआर। मनोज मिश्रा, जे.

राजस्व प्रविष्टियाँ भी उनके पक्ष में थीं, इसलिए तीसरी रिट याचिका पर कार्रवाई का कारण केवल तभी उत्पन्न हुआ जब राजस्व प्रविष्टियों में बाधा डाली गई थी। चूंकि राजस्व प्रविष्टि में परिवर्तन के बारे में जानकारी 25.10.2012 पर प्राप्त हुई थी, इसलिए उसके तुरंत बाद दायर रिट याचिका पर रोक नहीं लगाई गई थी।

18. उनकी दलीलों के समर्थन में, प्रथम प्रतिवादी के विद्वान वकील ने उन अधिकारियों पर भरोसा किया जिन्हें इस अपील में विवादित आदेश में उद्धृत किया गया है।

चर्चा और विश्लेषण

19. हमने प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का अध्ययन किया है।

20. इससे पहले कि हम आगे बढ़ें, तथ्यों को दोहराना उपयोगी होगा कि इसके संबंध में कोई विवाद नहीं है। ये हैं:

(i) प्रथम प्रतिवादी की वर्ग मीटर भूमि को अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 8 (4) के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिशेष घोषित किया गया था।

(ii) अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (1) के तहत अधिसूचना 09.01.1978 पर प्रकाशित की गई थी।

(iii) धारा 10 (3) के तहत राज्य में अधिशेष भूमि को निहित करने की अधिसूचना आधिकारिक राजपत्र में 15.1.1979 पर प्रकाशित की गई थी।

(iv) दिनांक 26.11.1977 के आदेश पर सवाल उठाते हुए, वर्ष 1986 में प्रथम प्रतिवादी के नेतृत्व में एक रिट याचिका दायर की गई थी, जिसे सक्षम प्राधिकरण के समक्ष अधिकार क्षेत्र की याचिका उठाने की स्वतंत्रता के साथ खारिज कर दिया गया था।

(v) प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा की गई आपत्ति को सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 27.03.1987 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया। आदेश में यह देखा गया कि कब्जा पहले ही ले लिया गया है।

(vi) दिनांक 27.03.1987 के आदेश को 1987 की रिट याचिका संख्या 9702 के माध्यम से चुनौती दी गई थी, जिसमें 20.08.1987 पर एक एकतरफा अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसमें निर्देश दिया गया था कि मूल याचिकाकर्ता को विवादग्रस्त भूमि से बेदखल नहीं किया जाएगा। हालांकि, उक्त रिट याचिका का निपटारा करते समय, कब्जे का सवाल अनिर्णित छोड़ दिया गया था। बल्कि, एक खुली घोषणा की गई थी कि यदि वास्तविक कब्जा है

918

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

यदि निरसन अधिनियम, 1976 के प्रारंभ की तारीख तक नहीं लिया गया है, तो अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाएगी, लेकिन यदि कब्जा ले लिया गया है, तो वे कम नहीं होंगे।

21. ऊपर देखे गए तथ्यों से, जो विवाद से परे हैं, वह यह है कि-(ए) मूल याचिकाकर्ता की भूमि के वर्ग मीटर को अधिशेष घोषित किया गया था और, धारा 10 (1) दिनांक के तहत अधिसूचना के बाद, अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत राज्य में भूमि को निहित करने के लिए एक अधिसूचना जारी की गई थी; (बी) न तो भूमि को अधिशेष घोषित करने का आदेश, न ही राज्य में भूमि को निहित करने की अधिसूचना, को अलग कर दिया गया था या अमान्य घोषित कर दिया गया था। यहां तक कि सक्षम प्राधिकारी का दिनांक 27.03.1987 का आदेश, जिसमें अधिकतम सीमा वाले अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र के संबंध में मूल याचिकाकर्ता की आपत्ति को खारिज कर दिया गया है, को भी दरकिनार नहीं किया गया है।

22. आश्चर्य की बात है कि यह मुद्दा कि क्या कब्जा निरसन अधिनियम, 1999 के प्रारंभ से पहले लिया गया था, हालांकि 1987 की रिट याचिका No.9702 में सीधे निर्धारण के लिए उत्पन्न हुआ था, तय नहीं किया गया था। यह मुद्दा महत्वपूर्ण था क्योंकि पक्षों के अधिकार इसके निर्धारण पर निर्भर थे। फिर भी, अज्ञात कारणों से, उच्च न्यायालय ने रिट याचिका सं. 1987 का 9702।

23. अधिकार का तथ्य अनिवार्य रूप से तथ्य का प्रश्न है। हालांकि ऐसा कोई कठोर और तेज नियम नहीं है कि तथ्य के प्रश्न को रिट अधिकार क्षेत्र में निर्धारित नहीं किया जा सकता है, लेकिन तथ्य के प्रश्न पर पक्षों के बीच गंभीर विवाद की स्थिति में, एक रिट अदालत आमतौर पर इसका निर्णय लेने से बचती है। इसके अलावा, जब रिट याचिकाकर्ता के पास एक वैकल्पिक उपाय होता है जहां तथ्य के ऐसे विवादित प्रश्नों को आधिकारिक रूप से तय किया जा सकता है।

24. तत्काल मामले में, अधिशेष भूमि के वास्तविक कब्जे को लेकर एक गंभीर विवाद पैदा हो गया था। अपीलार्थियों के अनुसार, अधिशेष भूमि का भौतिक कब्जा अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (5) के तहत भूमि धारक को 27.02.1979 पर नोटिस देने के बाद 8.3.1979 पर ले

लिया गया था। दूसरी ओर, मूल याचिकाकर्ता के अनुसार अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा उनसे कभी नहीं लिया गया था, हालांकि राज्य ने कागज पर कब्जा कर लिया होगा।

25. उपरोक्त पृष्ठभूमि में, सबसे प्रमुख मुद्दा जो हमारे विचार के लिए उत्पन्न होता है वह है:

919

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएएन और एएनआर। मनोज मिश्रा, जे.

क्या रिट अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय को भूमि धारक से अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा लेने के संबंध में विवादास्पद मुद्दे पर निर्णय लेने से बचना चाहिए था, जबकि मुकदमे के पिछले दौर में इसका निर्णय नहीं लिया गया था, भले ही यह विचार के लिए उत्पन्न हुआ था?

26. इससे पहले कि हम उपरोक्त मुद्दे पर आगे बढ़ें, यह जांच करना उपयोगी होगा कि क्या तीसरी रिट याचिका के समय, मूल याचिकाकर्ता के पास विवादित भूमि पर अपने अधिकारों, यदि कोई हो, की रक्षा के लिए उचित राहत पाने के लिए मुकदमे का कोई वैकल्पिक उपाय था। इस संबंध में, हम यह देख सकते हैं कि आम तौर पर अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 के तहत पारित आदेशों और परिणामी अधिसूचनाओं पर सवाल उठाने का मुकदमा वर्जित है, क्योंकि अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 एक स्व-निहित संहिता है और इसके तहत पारित कोई भी आदेश वैधानिक अपील आदि के अधीन हैं। इसी कारण से, एक मुकदमा यह घोषित करने के लिए झूठ नहीं बोल सकता है कि अधिशेष भूमि, जिसे अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 10 (3) के तहत अधिसूचित किया गया है, निरसन अधिनियम के प्रवर्तन से पहले वास्तविक कब्जा लेने में विफलता के लिए अधिकतम सीमा से मुक्त है।

1999. (देखिए: एम. पी. बनाम राज्यघिसीलाल **14**; सक्षम प्राधिकारी, कलकत्ता, शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, **1976** के तहत और एक अन्य बनाम डेविड मंटोश और अन्य **15**; और सौरव जैन और एक अन्य बनाम ए. बी. पी. डिजाइन और अन्य **16**)।

27. हालांकि, हमारे विचार में, उपरोक्त सिद्धांत पर तीसरी रिट याचिका में दिखाई गई कार्रवाई के कारण पर एक वाद को बाधित नहीं किया जाता। क्योंकि, यहाँ, मुकदमे के पहले दौर में (यानी, 1987 की रिट याचिका), उच्च न्यायालय ने पहले ही घोषणा कर दी थी कि यदि अतिरिक्त भूमि का वास्तविक कब्जा निरसन अधिनियम, 1999 में निर्दिष्ट कट-ऑफ तिथि (यानी, 11.1.1999) से पहले नहीं लिया गया है, तो अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 के तहत कार्यवाही समाप्त हो जाएगी, और यदि वास्तविक कब्जा कट-ऑफ तिथि तक ले लिया गया था, तो यह समाप्त नहीं होगा। इस सशर्त घोषणा को ध्यान में रखते हुए, अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 के तहत पारित आदेशों की वैधता के संबंध में एक और घोषणा और जारी अधिसूचना की आवश्यकता नहीं थी, इसलिए सक्षम क्षेत्राधिकार का एक न्यायालय एक मुकदमे पर विचार कर सकता था और ऐसी राहत प्रदान कर सकता था, जैसे -

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

कटौती की तारीख से पहले अधिशेष भूमि का वास्तविक कब्जा लिया गया था या नहीं, इसके निर्धारण पर निर्भर करते हुए वारंट किया जा सकता है। मामले के इस दृष्टिकोण में, हमारे सुविचारित विचार में, तीसरी रिट याचिका में प्रकट की गई कार्रवाई के कारण पर, प्रथम प्रतिवादी विवादित भूमि में अपने हित, यदि कोई हो, की रक्षा के लिए एक मुकदमा दायर कर सकता था।

28. हम इस कानून के प्रति सचेत हैं कि एक वैकल्पिक उपचार का अस्तित्व रिट अधिकार क्षेत्र के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंध नहीं है। इसके अलावा, जब एक रिट याचिका पर विचार किया जाता है, तो पक्षों ने अपनी दलीलों/आपत्तियों का आदान-प्रदान किया है और मामला लंबे समय से लंबित है। ऐसी स्थिति में गुण-दोष के आधार पर मामले का निर्णय करने के लिए एक ईमानदार अधिकारी होना चाहिए और रिट याचिकाकर्ता को वैकल्पिक उपचार के लिए तब तक नहीं भेजा जाना चाहिए, जब तक कि ऐसा करने के लिए मजबूर करने वाले कारण न हों। ऐसा एक सम्मोहक कारण उत्पन्न हो सकता है जहां तथ्य के प्रश्न पर पक्षों के बीच एक गंभीर विवाद है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री/साक्ष्य (ओं) न्यायालय को एक निश्चित निष्कर्ष पर आने में सक्षम बनाने के लिए असंगत/अनिर्णायक हैं।

29. उपरोक्त कानूनी सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमें इस बात पर विचार करना होगा कि क्या मामले के तथ्यों में, उच्च न्यायालय को प्रथम प्रतिवादी की तीसरी रिट याचिका को खारिज कर देना चाहिए था और उसे एक मुकदमे में डाल देना चाहिए था क्योंकि कब्जा लेने के संबंध में पक्षों के बीच एक गंभीर विवाद मौजूद था। इससे भी अधिक, जब उच्च न्यायालय ने मुकदमे के पहले दौर में, उक्त मुद्दे को उठाने से परहेज किया, भले ही यह पक्षों के बीच उत्पन्न हुआ था।

30. इसमें कोई संदेह नहीं है कि राज्य और भूमिधारक के बीच एक रिट कार्यवाही में, न्यायालय, अभिलेख पर रखी गई सामग्री/साक्ष्यों के आधार पर, यह निर्धारित कर सकता है कि कब्जा लिया गया है या नहीं और ऐसा करते समय, यह उस राज्य के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है जहां कब्जा लेने के वैधानिक तरीके का पालन नहीं किया गया है। हालांकि, जहां कहा जाता है कि कब्जा बहुत पहले ले लिया गया था और भूमि धारक की ओर से रिट अदालत का दरवाजा खटखटाने में अनुचित देरी होती है, तो कब्जा लेने के लिए निर्धारित प्रक्रिया का उल्लंघन एक निर्धारक कारक नहीं होगा, क्योंकि यह लिया जा सकता है कि जिस व्यक्ति के लाभ के लिए प्रक्रिया मौजूद थी, उसने उसके तहत अपने अधिकार को माफ कर दिया था।

[असम राज्य बनाम भास्कर ज्योति सरमा, (ऊपर) देखें।] ऐसी स्थिति में,

वास्तविक अधिकार के तथ्य का निर्धारण अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों/साक्ष्यों के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि केवल 921 को लागू करके।

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएन और एनआर। मनोज मिश्रा, जे.

भूमि धारक से कब्जा लेने के लिए अपनाई गई प्रक्रिया में त्रुटि। और यदि रिट अदालत इस तरह के प्रश्न का निर्धारण करने के लिए, या तो अभिलेख पर असंवेदनशील/अनिर्णायक सामग्री/साक्ष्य (ओं) के लिए या क्योंकि मौखिक साक्ष्य की भी आवश्यकता होगी, तो वह रिट याचिकाकर्ता को एक वाद के लिए खारिज कर सकती है, यदि मुकदमा अन्यथा बनाए रखने योग्य है।

31. तत्काल मामले में, मूल याचिकाकर्ता को जानकारी थी कि उसकी भूमि का 5499.20 वर्ग मीटर दिनांकित 26.11.1977 आदेश द्वारा अधिशेष घोषित किया गया था। फिर भी, इस आदेश को वर्ष 1986 से पहले रिट याचिका के माध्यम से चुनौती दी गई थी। बीच में क्या हुआ इसका खुलासा नहीं किया गया है। भले ही हम यह मान लें कि तीसरी रिट याचिका कार्रवाई के एक अलग कारण पर आधारित थी, फिर भी इस बारे में एक फुसफुसाहट हो सकती थी कि पहली रिट याचिका में इतनी लंबी देरी का कारण क्या था, विशेष रूप से जब मूल याचिकाकर्ता को राज्य के मामले के बारे में पूरी तरह से पता था कि निहित अधिसूचना के प्रकाशन के बाद वर्ष 1979 में कब्जा ले लिया गया था। इस देरी के लिए एकमात्र स्पष्टीकरण, यदि कोई हो, रिट याचिका के पैराग्राफ 4 में पाया जा सकता है, जहां यह कहा गया है कि 26.11.1977 का आदेश एकतरफा था। भले ही हम स्वीकार करते हैं कि 26.11.1977 दिनांकित आदेश एकतरफा था, रिट याचिका में कोई प्रकटीकरण नहीं है कि यह मूल याचिकाकर्ता की जानकारी में कब आया।

32. इससे भी अधिक दिलचस्प बात यह है कि तीसरी रिट याचिका में कोई विशिष्ट कथन नहीं है कि कब्जा लेने के संबंध में दिनांकित 27.03.1987 के आदेश में पाठ करना गलत है। हालाँकि रिट याचिका के पैराग्राफ 9 में कहा गया है कि 26.11.1977 और 27.3.1987 के आदेशों के तहत कब्जा कभी नहीं लिया गया था। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कब्जा दिनांक 27.03.1987 के आदेश के तहत नहीं लिया गया था। बल्कि, यह आरोप लगाया जाता है कि यह अधिसूचना दिनांक 15.1.1979 के अनुसार लिया गया था। इस प्रकार, जब तक तीसरी रिट याचिका दायर की गई, तब तक 15.1.1979 पर आधिकारिक राजपत्र में एक निहित अधिसूचना पहले ही प्रकाशित हो चुकी थी। इसके अलावा, सक्षम प्राधिकरण के दिनांक 27.03.1987 के आदेश में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि राज्य ने भूमि पर कब्जा कर लिया है। फिर भी, रिट याचिका में कोई बयान नहीं है कि 27.03.1987 के आदेश में कब्जा लेने के संबंध में गलत पाठ है। उपरोक्त सभी कारणों से, हमारे विचार में, उच्च न्यायालय को मूल याचिकाकर्ता के इस दावे के बारे में चौकस रहना चाहिए था कि कब्जा निरसन अधिनियम, 1999 के प्रवर्तन तक नहीं लिया गया था।

33. जहां तक मूल याचिकाकर्ता द्वारा रखी गई दस्तावेजी सामग्री का संबंध है, हम देखते हैं कि उस अवधि का कोई खतौनी या खसरा उद्धरण नहीं है

1979 से 1987 तक एफ. आई. का नेतृत्व किया गया था। तीसरी रिट याचिका में 1405 से 1417 फसली की अवधि के खतौनी या खसरा उद्धरणों को जोड़ा गया है, जो वर्ष 1998 से वर्ष 2010 तक के हैं। उन दस्तावेजों के अलावा, 1989 से शुरू होने वाली अवधि की कुछ राजस्व प्राप्तियों का भी पता लगाया गया है। राज्य के अनुसार, अधिशेष भूमि का कब्जा वर्ष 1979 में ले लिया गया था। यदि ऐसा था, भले ही याचिकाकर्ता ने इसके बाद कभी कब्जा कर लिया हो, तो यह इंदौर विकास प्राधिकरण (उपरोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय के मद्देनजर राज्य के अधिकार को विफल नहीं करेगा, जहां निर्णय के पैराग्राफ 258 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिग्रहण और कब्जा लेने के परिणामस्वरूप एक बार भूमि का अधिकार राज्य में निहित हो जाता है, भले ही भूमि धारक ने राज्य द्वारा कब्जा किए जाने के बाद उस पर कब्जा बनाए रखा हो या अन्यथा अतिक्रमण किया हो, वह सिर्फ एक अतिक्रमणकारी है और उसका कब्जा, यदि कोई हो, मालिक यानी राज्य की ओर से होगा।

34. इस स्तर पर, हम प्रत्यर्थी की ओर से दिए गए एक अन्य तर्क को अस्वीकार करने के लिए नोटिस कर सकते हैं, जो यह है कि उच्च न्यायालय ने मूल याचिकाकर्ता के कब्जे की रक्षा करते हुए एक अंतरिम आदेश दिया था, इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि उस समय तक उससे कब्जा नहीं लिया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मूल याचिकाकर्ता एक एकतरफा अंतरिम आदेश प्राप्त करने में सफल रहा, लेकिन यह सुझाव देने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं है कि इस अंतरिम आदेश को राज्य की आपत्ति पर विचार करने के बाद स्वीकार किया गया था। इसके अलावा, यदि अंतरिम आदेश देने से पहले कब्जा ले लिया गया था, जैसा कि अपीलार्थियों का मामला है, और रिट याचिका का निपटारा करते समय कब्जे का सवाल खुला छोड़ दिया गया था, तो अंतरिम आदेश, किसी भी तरह से, कब्जे की निरंतरता साबित करने के लिए निर्णायक नहीं होगा। इन परिस्थितियों में और यह भी कि वर्ष 1979 और 1987 के बीच मूल याचिकाकर्ता के कब्जे के संबंध में कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं दिया गया था, हमारे विचार में, अंतरिम आदेश में यह साबित करने के लिए बहुत अधिक साक्ष्य मूल्य नहीं था कि कब्जा वर्ष 1987 से पहले नहीं लिया गया था।

निष्कर्ष

35. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए और निम्नलिखित को ध्यान में रखते हुए: (क) कि अधिशेष भूमि पर कब्जा करने के संबंध में एक गंभीर विवाद था; (ख) निहित अधिसूचना के प्रकाशन के बाद राज्य द्वारा कथित रूप से कब्जा लेने की तारीख से पहली रिट याचिका में लगभग सात साल की देरी हुई थी; (ग) कोई दस्तावेजी 923 नहीं।

यू. पी. राज्य और ए. एन. आर. बनाम ईएचएसएन और एएनआर। मनोज मिश्रा, जे.

अधिकार लेने की कथित तिथि और प्रथम रिट याचिका के लिंग के बीच की अवधि के खसरा या खतौनी जैसे साक्ष्य मूल याचिकाकर्ता के नेतृत्व में थे; (घ) मुकदमे के पहले दो दौर में, उच्च

न्यायालय ने अधिशेष भूमि के कब्जे के मुद्दे पर निर्णय लेने से परहेज किया, भले ही वह मुद्दा सीधे पक्षों के बीच उत्पन्न हुआ था; और (ड) कि कब्जा लेने के लिए निर्धारित वैधानिक प्रक्रिया का उल्लंघन राज्य के कब्जे के दावे को खारिज करने का एकमात्र आधार नहीं हो सकता है, जब यह कहा जाता है कि यह मुद्दा उठाए जाने की तारीख से बहुत पहले लिया गया था, तो हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय को अधिशेष भूमि के वास्तविक कब्जे के संबंध में मुद्दे पर निर्णय लेने से बचना चाहिए था। इसके बजाय, रिट याचिकाकर्ता को एक मुकदमे में भेज दिया जाना चाहिए था।

36. उपरोक्त निष्कर्ष को देखते हुए, अपील की अनुमति दी जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को दरकिनारा कर दिया जाता है। प्रथम प्रत्यर्थी की रिट याचिका को मुकदमा दायर करने के उसके अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना खारिज कर दिया जाता है। दल अपना खर्च स्वयं वहन करें।

37. यह स्पष्ट किया जाता है कि हमने इस बारे में कोई बाध्यकारी राय व्यक्त नहीं की है कि क्या राज्य द्वारा अतिरिक्त भूमि का कब्जा निरसन अधिनियम, 1999 में निर्दिष्ट कट-ऑफ तिथि से पहले लिया गया था। इस संबंध में अवलोकन, यदि कोई हों, विशुद्ध रूप से यह तय करने के उद्देश्य से हैं कि उच्च न्यायालय को रिट याचिका पर विचार करना चाहिए था या नहीं। इसलिए, यदि कोई मुकदमा दायर किया जाता है तो उसका निर्णय उसके गुण-दोष के आधार पर किया जाएगा।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोट:

अपील की अनुमति दी गई।

अंकित ज्ञान